International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 22-02-2023, Accepted: 09-03-2023, Published: 24-03-2023
Volume 9, Issue 2, 2023, Page No. 32-34

प्राकृतिक नहीं, एक मानव निर्मित आपदा है जोशीमठ हादसा

डॉ. महेश प्रभाकर रत्नपारखी
सहयोगी प्राध्यापक, भूगोल विभाग, आर्टस, सायंस एवं कामर्स कॉलेज, बदनापूर, जिल्हा. जालना, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
क्या हमने उत्तराखंड के हिमालयी क्षेत्र में 2013, 2021 और 2023 में आई आपदाओं की त्रासदियों से कोई सबक सीखा? यह महत्वपूर्ण सवाल है। इस सवाल का जवाब ही उत्तराखंड की नाजुक पारिस्थितिकी के भविष्य को तय करेगा। सबसे पहले तो, स्वतंत्र शोधकर्ताओं और विशेषज्ञों को शामिल कर, परियोजनाओं की तत्काल सुरक्षा और पर्यावरण समीक्षा जरूरी है। दूसरा, समीक्षा समान इलाकों के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानकों और प्रोटोकॉल पर आधारित होनी चाहिए। तीसरा, जलविद्युत, सड़क और रेलवे सहित किसी भी बड़ी विकास परियोजना की कल्पना, निर्माण और विकास करते समय पर्यावरण कानूनों और प्रोटोकॉल का सख्त पालन किया जाना चाहिए। जोशीमठ एक चेतावनी है। यह न केवल पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील हिमालय में रहने वाले लोगों के लिए बड़ी चेतावनी है, बल्कि हिमालयी नदी प्रणालियों के तहत बाढ़ के मैदानों में रहने वालों की संभावित तबाही का भी संकेत है। साथ ही यह भी एक चेतावनी है कि समय रहते नाजुक और पर्यावरण रूप से संवेदनशील इलाकों में नासमझ, अवैज्ञानिक, खतरनाक, पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक और अलोकतांत्रिक विकास, बुनियादी ढांचा परियोजनाओं को उलट दिया जाए।

मूल शब्दः अलोकतांत्रिक विकास, भूस्खलन, परिस्थितिक संवेदनशीलता

हिमालय की गोद में बसे जोशीमठ के धंसने की शुरुआत बताती है कि हमने भौगोलिक दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों की पारिस्थितिक विशेषताओं को ध्यान में रखकर योजनाएं बनाने की क्षमता खो दी है। जोशीमठ शुरुआत भर है। भविष्य की तस्वीर भयावह है नेशनल थर्मल पावर कॉरपोरेशन (एनटीसीपी) की पनबिजली परियोजना समेत शहर में बड़े पैमाने पर चल रहीं निर्माण गतिविधियों के कारण इमारतों में दरारें पड़ने संबंधी चेतावनियों की अनदेखी करने को लेकर स्थानीय लोगों में सरकार के खिलाफ भारी आक्रोश है. देहरादून स्थित वाडिया इंस्टिट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी के निदेशक कलाचंद सैन ने कहा कि चूंकि जोशीमठ बद्रीनाथ, हेमकुंड साहिब और औली का प्रवेश द्वार है, इसलिए शहर के दबाव का सामना करने में सक्षम होने के बारे में सोचे बिना क्षेत्र में लंबे समय से निर्माण गतिविधियां चल रही हैं. इससे भी वहां के घरों में दरारें आई हों. जोशीमठ का डूबना एक ऐसी आपदा है जो इसके घटने का इंतजार कर रही थी। वर्ष 2021 के आखिर में ही इमारतों में दरारें दिखाई देने लगीं थी, लेकिन बाद में वे खतरनाक रूप से बड़ी और चौड़ी होती चली गईं, और इसके अलावा 800 से अधिक घरों और सड़कों में नई दरारें दिखाई देने लगी। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के नेशनल रिमोट सेंसिंग सेंटर ने जो तस्वीरें जारी की उनके अनुसार, जोशीमठ में 27 दिसंबर 2022 और 7 जनवरी 2023 के बीच 12 दिनों में लगभग 5.4 सेंटीमीटर के पैमाने का तेज धंसाव देखा गया है। इसरो ने भी अप्रैल और नवंबर 2022 के बीच लगभग 9 सेमी की गिरावट दर्ज की थी। सरकारी निर्देश के तहत सार्वजनिक बयान पर पाबंदी लगाए जाने के बाद इस तथ्य को वेबसाइट से हटा दिया गया है।

जोशीमठ का महत्व

उत्तराखंड के चमोली जिले के जोशीमठ शहर की आबादी 20,000 है और यह बद्रीनाथ और हेमकुंट साहिब तीर्थों को जाने वाले रास्ते पर मौजूद है। यह औली की अंतरराष्ट्रीय स्कीइंग और फूलों की प्रसिद्ध घाटी का भी एक शुरुआती बिंदु है। यह शहर भारत–चीन सीमा से निकटता के कारण रणनीतिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। हिमालय की ढलानों पर 1,874 मीटर की ऊंचाई पर बसे जोशीमठ शहर के धंसने की शुरुआत हो चुकी है। आशंका इस बात की है कि केवल एक यही शहर ही नहीं, बल्कि आसपास के दूसरे कई गांव या कस्बे भी धीरे–धीरे धरती में समा सकते हैं। लोगों को सुरक्षित जगहों पर पहुंचाया जा रहा है और सरकारें उन सुरक्षित जगहों की तलाश में जी–जान से जुटी हैं, जहां लोगों को फिलहाल अस्थायी तौर पर स्थानांतरित किया जा रहा।

यह सब तब हो रहा है, जब पहाड़ी इलाके क्रूर शीतलहर की भयानक चपेट में हैं। निश्चित रूप से यह एक मानवीय त्रासदी है, लेकिन विडंबना यह है कि इस त्रासदी का कारण भी मनुष्य ही है। सच यह है कि हिमालय दुनिया की सबसे नवीनतम पर्वतमाला है। इसका अर्थ यह है कि इस श्रृंखला के ढलान अस्थिर हैं। ये भुरभुरी मिट्टी से निर्मित ढलानें हैं और भूस्खलन और अपक्षरण की दृष्टि से बेहद खतरनाक समझे जाते हैं। यह बात भी गौरतलब है कि यह पूरा भूक्षेत्र भूकंप की दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील है। उस पर जलवायु परिवर्तन जैसे कारक भी हैं जिनके कारण इस क्षेत्र में असमय और भारी वर्षा की आशंका हमेशा बनी रहती है। निष्कर्ष यह है कि यह बिल्कुल एक "भिन्न" इलाका है। यह कछार मिट्टी पर बसा भारत का मैदानी इलाका नहीं है, यह भारतीय प्रायद्वीप का भूभाग भी नहीं, जहां कठोर पत्थर पाए जाते हैं, और न यह आल्पस के ढलान हैं जिनकी पर्वतमालाएं दुनिया में सबसे पुरानी हैं।

ये बुनियादी बाते बतानेकी आवश्यक्ता इस लीये है, क्योंकि हम इस भूभाग की पारिस्थितिकी विशिष्टता को दिमाग में रखकर योजनाएं बनाने की अपनी काबिलियत को खो चुके हैं। विकास के नाम पर हमने अंधाधुंध रफ्तार में और सोचे–समझे बिना निर्माण का काम किया है। इसका यह मतलब हरगिज नहीं है कि इन इलाकों को सड़क, पानी, नालियों और आवासों जैसी बुनियादी सुविधाओं से दूर रहना चाहिए, बल्कि इसका अभिप्राय यह है कि योजनाओं को सुसंगति और उपयुक्ति की दृष्टि से देखे जाने की आवश्यकता है। ये निर्माण किस रूप में होने चाहिए, कहां होने चाहिए और किस संख्या में होने चाहिए और इन निर्माणों का क्रियान्वयन सुनिश्चितपूर्ण ढंग से होना चाहिए। इस बारे में विस्तृत रूप से सोचे जाने की जरूरत है। यहां जलविद्युत

परियोजनाओं के उदाहरण लिए जा सकते हैं। इस बात की आशंका आरंभ से ही थी कि 520 मेगावाट की तपोवन–विष्णुगाढ़ परियोजना जमीन के धंसने का एक कारण बन सकती है। लेकिन बांध के इंजीनियरों ने इस आशंका को सिरे से खारिज कर दिया था।

नई परियोजनाएँ

2021 से लेकर आज तक इस क्षेत्र में कई बार बहुत तेज बाढ़ आईं और भूस्खलन हुए। इन हादसों में न केवल ऋषिगंगा पनबिजली परियोजना बह गई बल्कि करीब 200 लोगों को अपनी जानें भी गंवानी पड़ी। हर एक विनाश ने हमें यही आगाह किया कि सुरंगें, सड़कें और घर बनाने से पहले हम पहाड़ों के अस्तित्व का सम्मान करना सीखें। वास्तविकता तो यह है कि इस इलाके में यह क्षमता प्राकृतिक तौर पर उपस्थित है कि वह अपनी महान नदियों की सहायता से स्वच्छ ऊर्जा का उत्पादन कर सके। प्रश्न यह है कि हमें कितनी संख्या में जलविद्युत इकाइयां बनानी चाहिए और बनाई जा चुकी परियोजनाओं से होने वाले नुकसान को हम कैसे कम कर सकते हैं? इस विषय पर इस इलाके की भौगोलिक संवेदनशीलता के प्रति विशेषज्ञों का दृष्टिकोण दुराग्रहपूर्ण दिखता है। बल्कि यह कहना मुनासिब होगा कि वे प्रकृति पर प्राद्यौगिकी का वर्चस्व स्थापित करना और प्रकृति को नए तरीके से दोबारा सृजित करना चाहते हैं।

भुरभुरे ढलानों से होकर गुजरने वाली गंगा और उसकी सहायक नदियों की 80 प्रतिशत धाराओं को सुरंगों के जरिये मोड़ने और कंक्रीट से निर्मित संयंत्रों और टर्बाइन से बिजली के उत्पादन की क्षमता को विकसित कर सकते हैं। परियोजना की रूपरेखा कुछ इस तरह से बनाई हैं कि प्रतिकूल मौसम में इसका जल का बहाव केवल 10 प्रतिशत तक ही हो सकेगा। ऐसी स्थिति में एक के तत्काल बाद दूसरी परियोजना की रूपरेखा बनाने के बाद नदियां केवल एक नाले के रूप में बदल कर रह जाएंगी। उन विशेषज्ञों की दृष्टि में विकास का अर्थ सहि है। लेकीण इसपर उपाय यह है की जो परियोजनाएं पूरी हो चुकी हैं, उनमें बदलाव लाकर उन्हें दोबारा इस रूप में पुनर्निमित किया जाए, ताकि वे नदियों के बहाव का अनुकरण कर सकें। इसका परिणाम यह होता कि जब नदी में अधिक पानी होता, तब बिजली का उत्पादन भी अधिक होता और नदी का जलस्तर जब सूख कर क्षीण हो जाता, तब बिजली भी कम पैदा होती। इस स्थिति में नदी अपने सहज और प्राकृतिक रूप में बहती रहती और उसे योजना की अपेक्षाओं के अनुसार व्यवहार करने की आवश्यकता भी नहीं होती।

विगत एक दशक में लगभग उन सभी 70 परियोजनाओं के निर्माण की दिशा में काम को जारी रखा। विनाश हो या विनाश न हो, विकास के पैरोकारों को इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला नहीं है। ऐसे में हमारे सामने फिलहाल जो समस्या है वह स्पष्ट संकेत करती है कि हम अभी भी उस विकास को सुनिश्चित करने में अक्षम हैं जो पारिस्थितिकी–अनुकूल और सामाजिक दृष्टि से समावेशी हो। आखिर ऐसा क्यों है कि इन परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार करने वाले संस्थान इनके संबंध में तकनीकी परामर्श देने में असमर्थ हैं, जबकि इनमें कई संस्थान तो इसी इलाके में स्थित हैं? क्या ऐसा इसलिए है कि उनका "विज्ञान" इतना अहंकारी हो गया है वे "प्रकृति" की मामूली गुत्थियों को नहीं समझ पा रहे हैं? या ऐसा इसलिए है कि नीति–निर्माण की प्रक्रिया इतनी हठ और पूर्वाग्रहों से भरी हो गई है कि वह अपनी निर्धारित परिधि और सादृश्यता से बाहर की चीजों को स्वीकार करने में अपनी तौहीन समझती है? नजरिया अगर नहीं बदला गया तो इस तरह के विनाश आगे भी होते रहेंगे। यह सच तो कम से कम हमें स्वीकार कर ही लेना चाहिए।

निर्माण परियोजनाओं को लागू करने की हड़बड़ी

वर्तमान सरकार के तहत तेजी से निर्माण परियोजनाओं की बाढ़ ने विनाश को इन नए और खतरनाक स्तरों पर ला दिया है। इस क्षेत्र में अब बड़ी संख्या में जलविद्युत परियोजनाएं निर्माणाधीन हैं। राज्य में लगभग 100 बांध हैं, और कई अन्य निर्माणाधीन हैं। कुछ अनुमानों के अनुसार, 450 से अधिक पनबिजली परियोजनाओं की योजना है, जिसका अर्थ है कि हर परियोजना कुछ दर्जन किलोमीटर के दायरे में हो सकती है। इनमें से कई को रन–ऑफ–द–रिवर परियोजनाएं माना जाता है, लेकिन, व्यवहार में, उनमें कुछ पानी को रोकना, सुरंग निर्माण और अन्य निर्माण कार्य शामिल हैं। इसके अलावा, इन बांधों और पनबिजली परियोजनाओं के निर्माण में वृक्षों की कटाई शामिल है, जबकि इस नुकसान को दूर करने के लिए वनीकरण के प्रति उदासीनता है। बड़े पैमाने पर निर्माण गतिविधियाँ, डायनामाइट का इस्तेमाल करके विस्फोट करना, और अन्य संदिग्ध तकनीकें पहले से ही अस्थिर पहाड़ी इलाकों में और अधिक अस्थिरता को सक्रिय करती हैं। प्रक्रियाओं और प्रोटोकॉल का उल्लंघन करते हुए निर्माण मलबे को अक्सर नदी में फेंक दिया जाता है। यह मलबा नदी के प्रवाह को अवरुद्ध करता है और नदी के तल को ऊपर उठाता है, जिससे बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है।

वर्षों से, ग्रामीणों, पर्यावरणविदों और विशेषज्ञों ने इन परियोजनाओं के खिलाफ बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन किए हैं। उत्तराखंड में 2013 की आपदा के बाद, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ समिति ने अधिकांश प्रस्तावित परियोजनाओं को रद्द करने की सिफारिश की थी, जिसे एक दूसरी समिति ने समर्थन दिया था। उसके बाद, एक तीसरी चुनी हुई समिति ने इन सिफारिशों को पलट दिया, लेकिन इससे स्वीकृत कई परियोजनाएं अभी भी विवादित हैं। सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त चोपड़ा समिति ने कहा था कि सुरक्षा के आधार पर पैरा–हिमनदी इलाके में समुद्र तल से 2,200 से 2,500 मीटर के बीच कोई बांध या पनबिजली परियोजना शुरू नहीं की जानी चाहिए। हिमालयी नदी बेसिन में एक लाख मेगावाट से अधिक पनबिजली का दोहन करने के लिए कई हजार बड़े, मध्यम और बड़े बांधों की योजना बनाई गई है, जिनमें से आधी ब्रह्मपुत्र से और शेष सिंधु और गंगा बेसिन से होंगी। पश्चिमी हिमालय में हिमाचल प्रदेश में देश की उच्चतम स्थापित जलविद्युत क्षमता 10,500 मेगावाट से अधिक है। सरकार इस क्षमता को दोगुना करने की योजना बना रही है।

बड़े पैमाने पर सड़क निर्माण भी चल रहा है, विशेष रूप से उत्तराखंड के चार प्रमुख तीर्थ स्थलों को जोड़ने और होटल और अन्य बुनियादी ढांचे के निर्माण के लिए 2016 में शुरू हुई 12,000 करोड़ रुपये की चार धाम परियोजना प्रमुख है। इस परियोजना को छोटी–छोटी परियोजनाओं में बांट कर पर्यावरण मंजूरी की प्रक्रिया को दरकिनार कर दिया गया है। 889 किलोमीटर लंबी परियोजना को, एक तथाकथित सभी मौसम वाली सड़क परियोजना कहा गया और 52 योजनाओं को 100 किलोमीटर से कम वाली परियोजनाओं में विभाजित कर दिया गया तथा उन्हे पर्यावरणीय मूल्यांकन के बिना मंजूरी दे दी गई थी। केदारनाथ शहर, जिसे 2013 में भारी नुकसान हुआ था, को पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र की वहन क्षमता और नाजुकता की परवाह किए बिना पर्यटन को बढ़ावा देने के मकसद के साथ अब उसका पुनर्निर्माण किया जा रहा है। आसपास के पर्यावरण पर प्रभाव और पारिस्थितिकी की भेद्यता के बारे में बहुत कम सोचा गया है। वैकल्पिक सुझावों को दरकिनार कर दिया गया है, जैसे विनियमित तीर्थयात्री यातायात के साथ कम ऊंचाई पर आवासीय बुनियादी ढांचे का निर्माण करना। उस पर खराब मौसम की घटनाओं के समय, भूस्खलन और ढलान अस्थिरता, और हिमनदों की निगरानी और इलाके की निगरानी लगभग न के बराबर है।

वैज्ञानिक समुदाय को चुप करना और सार्वजनिक आक्रोश को दबाना

राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) और उत्तराखंड सरकार ने इसरो समेत कई सरकारी संस्थानों को बिना पूर्वानुमति के जोशीमठ की स्थिति पर मीडिया के साथ बातचीत या सोशल मीडिया पर जानकारी साझा नहीं करने का निर्देश दिया था। तथ्यों और निष्कर्षों को साझा करने से वैज्ञानिक समुदाय को रोकना वर्तमान सरकार के दौरान पहला उदाहरण नहीं है। जोशीमठ के निवासी डेढ़ साल से विरोध कर स्थानीय प्रशासन को लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि ये परियोजनाएं उनके इलाके को तबाह कर देंगी। 2021 में, निवासियों और कार्यकर्ताओं ने केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के खिलाफ उत्तराखंड उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की थी। इसने जोशीमठ के पास धौलीगंगा–ऋषिगंगा उप–बेसिन में ब्लास्टिंग, स्टोन क्रशिंग और खनन गतिविधियों सहित कई को बंद करने की मांग की थी, और 105 मेगावाट ऋषिगंगा और 520 मेगावाट तपोवन–विष्णुगढ़ जलविद्युत परियोजनाओं के लिए पर्यावरण और वन मंजूरी को रद्द करने की भी मांग की थी। लेकिन एक आश्चर्यजनक फैसले में, उच्च न्यायालय ने जनता की याचिका को खारिज कर दिया और कहा कि उनकी याचिका अत्यधिक प्रेरित है और याचिकाकर्ताओं को एक अज्ञात हाथ की कठपुतली बताते हुए एक आदेश पारित कर दिया था।

जोशीमठ एक चेतावनी है। यह न केवल पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील हिमालय में रहने वाले लोगों के लिए बड़ी चेतावनी है, बल्कि हिमालयी नदी प्रणालियों के तहत बाढ़ के मैदानों में रहने वालों की संभावित तबाही का भी संकेत है। साथ ही यह भी एक चेतावनी है कि समय रहते नाजुक और पर्यावरण रूप से संवेदनशील इलाकों में नासमझ, अवैज्ञानिक, खतरनाक, पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक और अलोकतांत्रिक विकास, बुनियादी ढांचा परियोजनाओं को उलट दिया जाए।

संदर्भ

1. https://www.downtoearth.org.in
2. https://www.im4change.org
3. https://www.ichowk.in
4. https://www.thewirehindi.com
5. https://www.jantaserishta.com
6. https://www.unicef.org
7. News Paper, Times of India [21 Jan.2023]
8. News Paper, Loksatta, Feb 2023.